SEMESTER – IV

EC – 1

Unit – 1

Tribal Movement

- **इकाई की रूप-रेखा :**

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 कोल विद्रोह

1.3 संथाल विद्रोह

1.4 बिरसा मुंडा आंदोलन

1.5 ताना भगत आंदोलन

1.6 झारखंड राज्य का निर्माण

Vetted by :

प्रो॰ (डॉ॰) सुरेंद्र कुमार

विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग

पटना विश्वविद्यालय, पटना

संपर्क : 9835463960

डॉ॰ राजेश कुमार

अतिथि शिक्षक, इतिहास विभाग

पटना विश्वविद्यालय, पटना

संपर्क : 9430934482

1.0 उद्देश्य :

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- जनजातियों तथा उसके श्रेणियों के बारे में आप जान पाएँगे ।
- जनजाति विद्रोहों के कारणों एवं परिणामों को जान पाएँगे ।
- इकाई के इस भाग में आप प्रमुख रूप से संथाल विद्रोह की पृष्ठभूमि, कारण तथा परिणामों को जान पाएँगे ।

1.1 प्रस्तावना :

इस इकाई के पहले भाग में हमलोगों ने 1.2 अर्थात् कोल विद्रोह की चर्चा की है । इकाई के इस भाग में हमलोग प्रमुख रूप से संथाल हूल/विद्राहे के बारे में चर्चा करेंगे। इस आग में भी इस बात की चर्चा की जाएगी, कि औपनिवेशिक शासन की स्थापना के बाद अर्थव्यवस्था, कानून प्रशासन और अन्य क्षेत्रों में जो परिवर्तन हुआ उसका संथाल जनजाति के आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक जीवन पर क्या प्रभाव पड़ा । इससे पहले हमलोग जनजाति के श्रेणी तथा विद्रोह के प्रायः मूल कारणों को जानने का प्रयास करेंगे ।

जनजाति वास्तव में भारत के आदिवासियों के लिए इस्तेमाल होनेवाला एक वैधानिक पद है । भारत के संविधान में इसके लिए अनुसूचित जनजाति शब्द का प्रयोग हुआ है और इनके लिए विशेष प्रावधान लागू किए गए हैं ।

प्रजातीय आधार पर भारतीय कबीलों को प्रमुख रूप से तीन श्रेणियों में विभाजित किया गया है :

(1) श्रेणी-I : प्रथम श्रेणी में मंगोलीय मूल के नागा, कूकी, गारो तथा असमी कबीले या अल्मोडा जिले के भोटिया कबीले आते हैं ।

(2) श्रेणी-II : दूसरी श्रेणी के अंतर्गत मुंडा, संथाल, कोरवा आदि पुरा-ऑस्ट्रेलियाई कबीले रखे जाते हैं ।

(3) श्रेणी-III : तीसरी श्रेणी के विशुद्ध आर्य श्रेणी के हिमालयवासी खस कबीले या हिन्द-आर्य रक्त की प्रधानता लिए किन्तु मिश्रित प्रकार के **भील** आदि प्रकार के कबीले रखे जाते हैं ।

अधिकांश जनजाति विद्रोहों का प्रायः मूल कारण होते हैं :

(1) कबीली भूमि से इनका निष्कासन

(2) कबीली प्राकृतिक संसाधनों का बाहरी लोगों द्वारा उपयोग

(3) साहूकार, बाहरी खिलौनों और आभूषणों के विक्रेताओं द्वारा इनका शोषण

(4) ईसाई मिशनरियों का हस्तक्षेप आदि

1.3 संथाल विद्रोह (1855-56) :–

भारत में ब्रिटिश साम्राज्य का विस्तार और नई ब्रिटिश शासन पद्धति के फलस्वरूप राजनैतिक, आर्थिक एवं सामाजिक क्षेत्रों में विभिन्न परिवर्तन हुए । इन परिवर्तनों के कारण भारत के विभिन्न प्रदेशों एवं जन-समुदाय के विभिन्न वर्गों में असंतोष बढ़ता गया, जिसका एक परिणाम संथाल विद्रोह (1855-56) के रूप में भी देखने को मिला।

संथाल जनजाति एक शांतिप्रिय तथा विनम्र लोग थे, जो आरंभ में मानभूम, बडाभूम, हजारीबाग, मिदनापुर, वीरभूम आदि प्रदेशों में रहते थे । यह जनजाति शुरू से ही जागरूक और स्वतंत्रप्रिय रही हैं और इसने शुरूआती दौर में मुस्लिम आक्रमणकारियों से भी टक्कर ली थी । इनका मुख्य पेशा कृषि और आखेट रहा है । ये लोग जिस भूमि को जोत रहे थे, 1793 ई॰ में लॉर्ड कार्नवालिस के द्वारा लागू की गई स्थायी बंदोबस्त व्यवस्था के कारण अब जमींदारों के कब्जे में चली गई । जब जमींदारों ने इनसे अधिक लगान की मांग की, तब ये लोग अपने पैतृक भूमि को छोड़कर राजमहल

की पहाड़ियों में आकर बस गए । इन लोगों ने इस स्थान के बंजर भूमि को काफी मेहनत के पश्चात् कृषि योग्य बनाया । जमींदारों ने कालांतर में इस भूमि पर भी अपना दावा पेश किया और यहाँ से लगान प्राप्त करने के लिए संथालों पर दबाव डालना शुरू कर दिया, जिसके कारण ये संथाल लोग इन जमींदारों और राजाओं से नफरत करने लगे; जैसा कि 1856 ई॰ में दुमका के तात्कालीन उपायुक्त **ए॰ आर॰ थैम्पसन** ने भी लिखा है, कि संथाल लोग महेशपुर एवं पाकुड़ के राजाओं से नफरत करते थे, क्योंकि वे गैर-संथालों को संथालों के गाँव पट्टा के रूप में दिया करते थे ।

इन क्षेत्रों में गैर-जनजाति के लोगों को **दिकू** के नाम से भी जाना जाता था । इनमें बंगाल के व्यापारी एवं महाजनों की संख्या अधिक थी । ये दिकू व्यापारी, महाजन और सूदखोर लोग मिलकर संथालों का जबर्दस्त रूप से शोषण करना शुरू किया । बरसात के समय ये 'दिकू' लोग संथालों को मदद के नाम पर कुछ पैसे या फिर चावल दे देते थे और फिर अपने चंगुल में इस तरह फँसा लेते थे, कि इनसे निकलना इनके लिए मुश्किल हो जाता था । ये कर्ज के नाम पर दिये गये पैसे पर 50 से 500 प्रतिशत तक ब्याज वसूल किया करते थे । इस प्रकाार, धनी महाजनों का बड़हैत एवं हिरणपुर में एक बड़ा वर्ग तैयार हो गया, जो निरीह संथालों का शोषण किया करते थे । ये लोग शोषण के और भी विभिन्न तरीकों को अपनाते थे । जैसे – हाट-बाजारों में कम बटखरों का उपयोग; धनिकों के हाथी, घोड़े और अन्य मवेशियों को गरीब संथालों के खेतों में चराया जाना आदि । इससे संथालों के मन में इनके प्रति नफरत उत्पन्न किया । **कलकत्ता रिव्यू** में लिखा गया है, कि "संथालों ने जब देखा कि उनकी उपज, उनके पशु, वे स्वयं और उनका परिवार भी इस ऋण के लिए साहूकारों के हाथों में चला जाता था और यह सब कुछ दे देने पर भी शेष रह जाता था ।" ऐसी परिस्थिति ने निश्चित रूप से इस व्यवस्था के खिलाफ लोगों के मन में असंतोष उत्पन्न किया ।

इसके साथ-साथ जब संथालों ने देखा कि ऊपर से नीचे तक सभी स्थानीय पुलिसकर्मी भ्रष्टाचारी एवं दुराचारी हो गए हैं और वे भी शोषण में जमींदारों और व्यापारियों का साथ दे रहे हैं । यहाँ तक कि न्यायालय भी इन्हीं शोषक वर्ग के साथ

है । इन परिस्थितियों में संथालों के पास इस व्यवस्था के खिलाफ विद्रोह के अलावा और कोई रास्ता नहीं बचा । संथाल विद्रोह के एक प्रमुख नेता कान्हू ने खुलेआम कहा था कि दिग्घ के नायब सजावल अथवा दारोगा **महेश दत्ता** तथा टेकारी (राजमहल) एवं सकरी के नायब सजावल **कैलाश प्रसाद** रिश्वत लिया करते थे । इस कारण वे संथालों के घृणापात्र बन गये थे ।

इन कारणों के अलावा रेलवे निर्माण कार्य में लगे यूरोपीय लोगों का अन्यायपूर्ण कार्य भी इस विद्रोह का कारण बना । 1856 में **कलकत्ता रिव्यू** में छपे एक समाचार में जानकारी मिलती है कि इस क्षेत्र के दो युवतियों का बलपूर्वक अपहरण कर लिया गया तथा कई संथालों की हत्या कर दी गई । इसके अलावा ये लोग संथालों की बकरियाँ, मुर्गियाँ आदि भी मुफ्त में ले लिया करते थे । इन सभी कारणों ने 1855-56 में संथाल विद्रोह को जन्म दिया ।

इस विद्रोह में भागलपुर, मानभूम, राजमहल की जनजातियों ने भाग लिया । राजमहल के मगनाडिही गाँव के चुलू संथाल के चार पुत्रों **: सिद्धू, कान्हू, चाँद और भैरो** ने इस विद्रोह का नेतृत्व किया । 30 जून, 1855 को लगभग 400 गाँवों के करीब दस हजार (10,000) संथाल अपने परंपरागत हथियार धनुष, बाण, भाले, तलवार और कुठार लेकर भगनडिही गाँव में एकत्रित हुए । उन्होंने इसी समय सिद्धू और कान्हू के नेतृत्व में स्वतंत्रता की घोषणा की और कहा कि "अब हमारे ऊपर कोई सरकार नहीं है, थानेदार नहीं है, हाकिम नहीं है अब संथाल राज्य स्थापित हो गया है ।" इन्होंने इसके बाद अपने शोषकों एवं सरकारी संपत्तियों पर हमला करना शुरू कर दिया ।

विद्रोह के प्रारंभिक लक्षण 1855 ई॰ के प्रारंभ से ही नजर आने लगे थे । कुछ संथालियों ने महाजनों और जमींदारों के नाजायज संपत्ति को लूटना शुरू कर दिया, जिसका फायदा चोर और डाकुओं ने भी संथालों के नाम पर उठाना शुरू कर दिया । ऐसी परिस्थिति में महाजनों ने दिग्घी थाना के दारोगा **महेशलाल दत्त** से मदद मांगी । इस बात की जानकारी हमें पाकुड़ के वकील **दिगंबर चक्रवर्ती** के लिखे गये विवरण से भी मिलती

है । जब दारोगा महेशलाल दत्त ने बदले की कार्रवाई की और कुछ संथालों को कैद कर लेजा रहा था, तब सिद्धू एवं कान्हू ने इन संथाल कैदियों को छुड़ाने का प्रयास किया । दारोगा महेशलाल दत्त ने तब सिद्धू और कान्हू को भी गिरफ्तार करना चाहा। इससे संथालों की भीड़ उत्तेजित हो गई और थानेदार महेशलाल दत्त की हत्या कर दी गई।

संथालों ने विद्रोह को सफल बनाने के उद्देश्य से **सिद्धू** को अपना राजा, कान्हू को मंत्री, चाँद को प्रशासक और भैरव को अपना सेनापति मनोनीत कर नये संथाल राज्य के गठन की घोषणा कर दी । सिद्धू और कान्हू ने **हुल** को सफल बनाने के लिए धर्म का भी सहारा लिया । **मरांग बुरु** (मुख्य देवता) और जाहेर-एस (मुख्य देवी) के दर्शन और उनके आदेश (अबुआ राज स्थापित करने के लिए) की बात को प्रचारित कर लोगों की भावना को उबारा । प्रत्येक घर से एक व्यक्ति को इस विद्रोह में शामिल होने का निमंत्रण देते हुए **डिक शासन** को समाप्त करने की घोषणा की गई । **छोटे दसमंजी** के द्वारा दिये गये विवरण से यह भी पता चलता है, कि इन आदेशों का पालन न करने वालों की हत्या करने का आदेश दिया गया था ।

3 जुलाई, 1855 को शुरू हुए इस विद्रोह में कई महाजनों और सौदागरों को मार डाला गया और कई स्थानों पर लूट-पाट मचाया गया । भागलपुर के कमिश्नर ने मेजर वरों के नेतृत्व में कंपनी की सेना को विद्रोहियों का सफाया करने हेतु भेजा । 16 जुलाई, 1855 को पुलिस, जमींदार और महाजनों की सम्मिलित सेना पराजित हुई । **लेफ्टिनेंट टाल मेइन** ने उनके ऊपर हमला किया, लेकिन उसे सफलता हाथ नहीं लगी ।

संथालों ने **दामिन-ए-कोह** के नाम से जाने वाले इन क्षेत्रों में अपनी स्वतंत्र सरकारी की स्थापना भी कर ली । अंतत: 10 नवंबर, 1855 को संथाल क्षेत्र को सैनिकों के हवालेकर दिया गया । संगठित एवं आधुनिक हथियारों से सुसज्जित ब्रिटिश सेना के सामने परंपरागत हथियारों से लड़नेवाले संथाल विद्रोही पराजित हुए । इन क्षेत्रों पर पुन: ब्रिटिश प्रभुत्व स्थापित हो गया ।

परिणाम :

संथाल विद्रोह के परिणाम और महत्व को कम कर आँकने का प्रयास किया जाता रहा है और इसे मात्र कुछ संथालों की नाराजगी का परिणाम माना जाता है । इसे मात्र स्थानीय विद्रोह कहा जाता रहा है । परंतु, इधर के कुछ वर्षों में इतिहासकारों ने इस पर व्यापक शोधकार्य किया है और यह दिखाने का प्रयास किया है, कि यह विद्रोह केवल स्थानीय विद्रोह नहीं था । **कार्ल मार्क्स** ने तो संथाल विद्रोह को **भारत का प्रथम जनक्रांति** तक कहा है ।

इस विद्रोह में संथालों की एकजुटता तथा नाराजगी का प्रभाव व्यापक रूप से देखने को मिलता है । जमींदार, साहुकार और सरकार भी इससे इतना ज्यादा भयभीत हुए, कि बहुतों ने अपना सब-कुछ छोड़कर वहाँ से भाग जाने में ही अपनी भलाई समझी। सरकार को सेना की मदद लेनी पड़ी । कलकत्ता, रानीगंज, देवधर, भागलपुर, पूर्णिया, मुंगेर, पटना आदि क्षेत्रों के प्रशासन को सरकार द्वारा निर्देश दिया गया कि संथाल विद्रोह दबाने में सेना की मदद करे । हालांकि कुछ विश्वासघातियों ने अंग्रेजों की मदद की, जिसके कारण भी विद्रोह को दबा दिया गया, परंतु सरकार को संथालों की समस्याओं की ओर ध्यान देना पड़ा । यह इस विद्रोह की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि के रूप में देखा जा सकता है ।

ब्रिटिश कंपनी की सरकार ने एक अधिनियम पारित कर संपूर्ण संथाली इलाकों को मिलाकर एक नया जिला बनाने का निर्णय लिया, जिसे **संथाल परगना** के नाम से जाना गया । यह नया जिला भागलपुर के आयुक्त के अधीन रखा गया । **एशली इडेन** को, जो इसके पूर्व संथाल विद्रोह को दबाने के लिए कार्यरत विशेष आयुक्त का सहायक था, इस जिले का प्रथम जिलाधीश बनाया गया ।

संथाल विद्रोह के पश्चात् बंगाल सरकार ने इस क्षेत्र में अनाज भंडारण तथा व्यापारियों के शोषण को समाप्त करने के लिए प्रयास करने शुरू किए । इस प्रयास के तहत्

देवधर, दुमका जैसे कई क्षेत्रों में अनाज भंडारों की स्थापना की । इसी तरह सिपाहियों को रसद की खोज में इन इलाकों में भटकने की मनाही कर दी गई । बाजारों में सही वजन देने के लिए कहा गया । **80 तोले** के एक सेर का बटखारा नाप-तौल में लाने का आदेश दिया गया और यह भी कहा गया कि जो इसका पालन नहीं करेगा, उसे दंडित किया जाएगा ।

इस विद्रोह के पश्चात् संथाल परगना में ब्रिटिश मिशनरियों को छोड़कर अन्य यूरोपीय मिशनरियों को प्रवेश की अनुमति नहीं दी गई और कहा गया कि संथालों के बीच धर्मांतरण में जोर जबर्दस्ती नहीं किया जाएगा । फादर-पोटेंट, जिन्होंने संथालों के बीच महान् कल्याणकारी कार्य किए, को स जिला के लोगों के उत्थान का दायित्व सौंपा गया।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है, कि निश्चित तौर पर संथाल विद्रोह बाहरी (दिकू) शोषकों के खिलाफ किया गया सशस्त्र विद्रोह था, जिसने ब्रिटिश प्रशासन को भी चुनौती दिया । इसका दायरा भी बहुत विस्तृत नहींथा और अंग्रेजों ने इसे दबा भी दिया। इसके बावजूद इस विद्रोह ने देश में असंख्य विद्रोहों का मार्ग प्रशस्त किया और ब्रिटिश साम्राज्य की अपराजेयता पर प्रश्नचिह्न खड़ा कर दिया, जिसका स्पष्ट प्रभाव कालांतर के वर्षों में देखने को मिला ।

Suggested Readings :

1. के॰ के॰ दत्ता 'दि संथाल इनसरेक्सन'

2. जियाउद्दीन अहमद 'बिहार के आदिवासी'

3. डॉ॰ बी॰ वीरोत्तम 'झारखंड : इतिहास एवं संस्कृति'

4. K. Suresh Singh (ed) : 'Tribal Movements in India (Vol.-II)'